भारतीय अर्थव्यवस्था : रोज़गार में बढ़ोतरी

बिबेक देबरॉय

वृद्धि से रोज़गार सृजन होना चाहिए। इसलिए सरकार (केंद्र अथवा राज्य) रोज़गार सृजन के लिए सबसे अच्छा कदम यही उठा सकती है कि वृद्धि में मदद करने वाला वातावरण तैयार करे। हमें सरकार के एजेंडा में शामिल कुछ बातों को अनदेखा नहीं करना चाहिए। वह कारोबार करने में सुगमता (इसे केवल कंपनियों का विनिर्माण नहीं माना जाए) के अनुपालन में आने वाला खर्च कम कर रही है और सार्वजनिक व्यय कर रही है ताकि वृद्धि, रोज़गार और उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए जरूरी घटकों की उपलब्धता सुनिश्चित हो सके

भारत काफी हद तक अनौपचारिक अर्थव्यवस्था है और निकट भविष्य में ऐसी ही बनी रहेगी। यहां कई तरह के बदलाव हो रहे हैं - ग्रामीण से शहरी, कृषि से गैर कृषि, अनौपचारिक से औपचारिक, मामूली आजीविका से वेतन वाला रोज़गार, आजीवन रोज़गार से अल्पावधि अनुबंध और नियोक्ता-कर्मचारी संबंधों से स्व-रोज़गार। ये बदलाव क्रम से नहीं बल्कि एक साथ हो रहे हैं और कभी-कभी एक-दूसरे से विपरीत दिशा में होते हैं। बंटे हुए श्रम बाज़ारों वाली विशाल और विषमांगी अर्थव्यवस्था में यह बात समझ आती है। अपेक्षाकृत अधिक श्रम आपूर्ति वाले क्षेत्रों के साथ ऐसे क्षेत्र हो सकते हैं, जहां श्रम की किल्लत है। कम कौशल वाले श्रम वर्गों के साथ ऐसे वर्ग भी हो सकते हैं, जो वैश्विक श्रम बाज़ारों के साथ जुड़े हों। इसे देखते हुए यहां उद्यम सर्वेक्षणों से रोज़गार के वैसे विश्वसनीय आंकड़े नहीं मिल सकते, जो उन देशों में मिलते हैं, जहां अधिक से अधिक लोग नियोक्ता-कर्मचारी संबंधों में बंधे हैं। उद्यम सर्वेक्षण होते हैं और होते रहेंगे। लेकिन उनकी उपयोगिता सीमित है। रोज़गार के विश्वसनीय आंकड़े पारिवारिक सर्वेक्षणों से ही आएंगे। दुर्भाग्य से आधिकारिक और व्यापक नमूनों वाले सर्वेक्षण पुराने हैं। एनएसएस के ऐसे आंकड़े हमें अंतिम बार 2011-12 में मिले थे। इसलिए रोज़गार के बारे में आंकड़े अधूरे हैं। 2018 की अंतिम तिमाही से इसमें सुधार शुरू हो जाएगा, जब वार्षिक (पहले की तरह पंचवर्षीय नहीं) रोज़गार सर्वेक्षण आरंभ हो जाएंगे और बाद में तिमाही सर्वेक्षण होंगे।

अनुपालन व्यय में कमी

वृद्धि से रोज़गार सृजन होना चाहिए। इसलिए सरकार (केंद्र अथवा राज्य) रोज़गार सृजन के लिए सबसे अच्छा कदम यही उठा सकती है कि वृद्धि में मदद करने वाला वातावरण तैयार करे। हमें सरकार के एजेंडा में शामिल कुछ बातों को अनदेखा नहीं करना चाहिए। वह कारोबार करने में सुगमता (इसे केवल कंपनियों का विनिर्माण नहीं माना जाए) के अनुपालन में आने वाला खर्च कम कर रही है और सार्वजनिक व्यय कर रही है ताकि वृद्धि, रोज़गार और उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए जरूरी घटकों की उपलब्धता सुनिश्चित हो सके। देश में उद्यमशीलता बहुत अधिक है और जरूरी नहीं कि यह उद्यमशीलता उद्यम के कानूनी दायरे में आए। स्टार्ट-अप इंडिया, स्टैंड अप इंडिया और मुद्रा योजना का उद्देश्य यही है। सरल शब्दों में कहें तो उद्यम शुरू करना ही आसान नहीं हुआ है, उसे बंद करना भी सरल हो गया है। (देश में पहली बार ऐसे उद्यमों के लिए बंदी के प्रावधान तैयार किए गए हैं, जो कंपनी के रूप में नहीं हैं और जिन्हें व्यक्तिगत दिवालिया प्रक्रिया से अलग कर दिया गया है।) सरकार हर किसी को काम नहीं दे सकती। न ही हर किसी को कर्मचारी बनने की कोशिश करनी चाहिए। नियोक्ता-कर्मचारी संबंधों और आजीवन अनुबंध की बात करने वाली नौकरियों पर जोर नहीं होना चाहिए। उनके बजाय ऐसे रोज़गार पर जोर होना चाहिए, जो वास्तव में अल्पकालिक और अनुबंध वाला हो।

सटीक आंकड़ों की आवश्यकता

वृद्धि स्वयं ही रोज़गार उत्पन्न नहीं करती। असल में वृद्धि की संरचना भी महत्वपूर्ण है। रोज़गारहीन वृद्धि पर बहस नई नहीं है। 2004-05 और 2009-10 में हुए एनएसएस सर्वेक्षणों में भी यह सामने आई

लेखक प्रधानमंत्री की आर्थिक सलाहकार परिषद के अध्यक्ष और नीति आयोग के सदस्य हैं। ईमेल: bibek.debroy@gov.in

थी। लेकिन एक सैद्धांतिक बात याद रखी जानी चाहिए। अब वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) बढ़ रहा है। मान लेते हैं कि वास्तविक वृद्धि 7 प्रतिशत है। क्या हमें लगता है कि श्रम उत्पादकता 7 प्रतिशत की दर से बढ़ी है? यदि नहीं तो रोज़गार में वृद्धि रही होगी। राष्ट्रीय आय पहचान से विपरीत आंकड़े नहीं आ सकते। इसीलिए साफ तौर पर आंकड़े उसे नहीं पकड़ पा रहे हैं, जो हो रहा है। साथ ही खेती के व्यवसायीकरण और विविधीकरण तथा खेत से इतर रोज़गार के मौके सृजित होने के बावजूद कृषि संभवत: सभी नए श्रमिकों को काम नहीं दे सकती। आधुनिक विनिर्माण भी पहले की तरह श्रम प्रधान नहीं रह गया है। इसीलिए इस प्रश्न का उत्तर सेवा क्षेत्र में ही ढूंढना होगा।

श्रम प्रधान विकास

अब मैं कुछ ऐसे मुद्दे सामने रखूंगा, जिन पर बहस की चाहे नहीं हो, चर्चा की जरूरत तो है। सबसे पहले भारत पूंजी नहीं बल्कि श्रम से अधिक संपन्न है। इसलिए यदि पूंजी अथवा श्रम का चुनाव बिगड़ता नहीं है तो वृद्धि भी श्रम प्रधान ही होनी चाहिए। इनपुट का चुनाव श्रम और पूंजी के तुलनात्मक मूल्यों पर आधारित होता है। संगठित क्षेत्र में श्रम की लागत जानबूझकर ऊंची किए जाने के बारे में तर्क काफी आगे आ चुके हैं, जिनमें केवल वेतन की लागत ही नहीं है बल्कि श्रम विधान के अनुपालन की लागत भी शामिल मानी जाती है। लेकिन 1991 के बाद अनुपालन की लागत बढ़ी नहीं हैं। वास्तव में उनमें कमी आई है। (यहां श्रम सुविधा पोर्टल की बात कर सकते हैं।) तो पूंजी/श्रम का चयन और भी विकृत क्यों हो गया है? इसका उत्तर पूंजी के उपयोग के लिए मिलने वाली सब्सिडी (अर्थात् कर छूट) के कारण पूंजी की लागत में आई तुलनात्मक कमी में ही मिल सकता है। ध्यान रखिए कि मौजूदा सरकार ने नए रोज़गार में सहायता देकर इसे बेअसर करने की कोशिश की है। दूसरी बात, देश के कुछ हिस्सों में श्रम की किल्लत की शिकायत क्यों है, जब दूसरे हिस्सों में श्रम की अत्यधिक आपूर्ति है? स्पष्ट है कि संभावित नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच बिचौलियों का खात्मा अधिक प्रभावी रूप से नहीं हो रहा है। गैर पंजीकृत श्रमिक ठेकेदारों का चलन भी सर्वविदित है। इसीलिए सरकार की पहल राष्ट्रीय करियर सर्विस पोर्टल का उल्लेख किया जाना चाहिए। तीसरी बात, जो आंकड़े मौजूद हैं, उनके अनुसार श्रम शक्ति और श्रम बल के बीच अंतर बढ़ता क्यों जा रहा है? श्रम शक्ति में महिलाओं ही नहीं बल्कि पुरुषों की भी सहभागिता की दर घट क्यों रही है? कामकाज में महिलाओं की बढ़ती प्रतिभागिता किसी भी सुधार एजेंडा में शामिल होती है, लेकिन कमी (हालांकि आंकड़े अधूरे हैं) होना पहेली है। क्या उच्चतर माध्यमिक और उच्च शिक्षा में प्रवेश की दर ऊंची होने के कारण यह अस्थायी चलन है? श्रम बाज़ारों समेत सभी बाज़ारों को सही मूल्य का ध्यान रखना चाहिए। इसीलिए इसका कारण यह तो नहीं कि जो वेतन दिया जा रहा है, वह अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं है? दूसरे शब्दों में कहें तो स्वैच्छिक बनाम अनैच्छिक बेरोज़गारी के बारे में हमारे पास कोई स्पष्टता नहीं है। चौथी बात, क्या दोनों के बीच यह फर्क शिक्षा और कौशल के बीच पारस्परिक संबंध की कमी का नतीजा है? शिक्षा चाहे सरकारी मदद से हो या निजी वित्तीय मदद से हो, उससे अधिक वेतन पाने की अपेक्षाएं बढ़ती हैं, लेकिन शिक्षा से जो कौशल मिलते हैं, बाज़ार के अनुसार वे उस वेतन के लायक नहीं हैं। पांचवीं बात, कौशल की समस्या तो है। इसलिए राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन पर ध्यान देना चाहिए। राष्ट्रीय कौशल विकास एजेंसी (एनएसडीए), राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडी) और प्रशिक्षण महानिदेशालय (डीजीटी) इसी के अंग हैं।

जब 2018 के अंत में विश्वसनीय आंकड़े आएंगे तो इन कार्यक्रमों के नतीजे भी दिखेंगे, जो रोज़गार वृद्धि के रूप में सामने आएंगे। ❑